# प्रथम अध्याय

## जैनेंद्रकुमार : व्यक्तित्व और कृतित्व

जैनेंद्रकुमारजी का व्यक्तित्व उनके कृतित्व से अलग नहीं किया जाता। आप हिंदी के लब्ध प्रतिष्ठित तथा मनो वैज्ञानिक साहित्यकार माने जाते हैं। हिंदी साहित्य में उन्होने, कहानी, उपन्यास, निबंध अनुवाद, आदि का योगदान दिया। हिंदी साहित्य में जैनेंद्रकुमारजी को साहित्यिक तथा वैचारिक धरातल पर उँचा स्थान प्राप्त हुआ है। जैनेंद्रजीका व्यक्तित्व न केवल वैचारिक धरातल पर विद्रोही था, बल्कि वे देश की स्वाधीनता के लिए आतंकवादी दल के सदस्य भी रहे थे। जीवन को यातनाओं तथा यंत्रणाओं को भी झेल चुके थे। आतंकवादी दल की रोमांचकारी घटनाओं ने पदाधिकारीओं के अत्याचारोंने तथा उस समय की हालातों ने जैनेंद्रकुमारजी के व्यक्तित्व को उभारा तथा निखारा। जीवन की अनुभूतियोंने जैनेंद्रकुमारजी को दृढ बनाया था, और संकल्प को गहनतम कर दिया था।

प्रेमचंद ने हिंदी कथा साहित्य को नवीन गति प्रदान कर सर्व प्रथम उसे जीवन के निकट प्रतिष्ठित किया था, लेकिन हिंदी साहित्य में मनो वैज्ञानिक, दार्शनिक, और विद्रोही, साहित्यकार के रूप में लिखने की प्रवृत्ति जैनेंद्रकुमारजीने निर्माण की। आश्रम की दैनिक जीवन परंपराने उन्हें भौतिक जगतसे उपर उठकर कुल बल देने का प्रयास किया।

उपन्यास सम्राट प्रेमचंद, गुरुदेव ठाकूर, महाकवि जयशंकर "प्रसाद" महात्मा गांधीजी, राष्ट्रकवी मैथिली शरण गुप्त, आदि

महापुरुषों के व्यक्तित्वोंका समुचित असर उनके जीवन प्रणालीमें देखा जा सकता है।

बचपन :

जैनेंद्रजीका जन्म उत्तर प्रदेश के अलीगढ जिले के कौडियागंज में २ जनवरी १९०५ इ. में हुआ। उनका मूलनाम आनंदीलाल था लेकिन यह नाम अधिक समयतक नहीं रहा। जन्म के छ: वर्ष पश्चात मामा महात्मा भगवानदीन के आश्रम में प्रविष्ठ होने पर उनका नाम "जैनेंद्रकुमार" में परिवर्तित हुआ। सन १९०७ इ. में पिताजी की मृत्यू हुई। तबसे जैनेंद्रकुमारजी पंद्रह वर्षोतक अपने मामा के पास रहें। माताजी श्रीमती रामदेवीबाई बहुत ही उदयमी और गृहकार्य कुशल गृहिणी थी।

जैनेंद्रकुमारजी की दो बडी बहने हैं। सबसे बडी बहन जीवन पर्यन्त अविवाहित रही। वे जैनेंद्रकुमारजी को बहुत प्यार करती थी। अपने बचपन के विषयमें जैनेंद्र का कथन है "शुरू से जैनेंद्र में इरादे की ताकत की कमी देखी जा सकती थी। वह किस्मत बनानेवालों में न था आपितु किस्मत ही उसे बनाती चला गई। एक भाट के निरीह बालक की तरह उसके छुटपन के दिन गुजरे। वह भौंचक्का सा बस और देखता और कभी अपने साथियों के बीच रहता था। साथी सिर्फ उसे गवारा करते थे। अपने पन का और अपनी जगह का उसे पता न था। कक्षा में किसी विषय में किसी साल पहले नंबर पर आ गया तो दुसरे किसी विषय में पिछड गया। ताज्जुब है कि फेल वे किसी दर्जे में नहीं हुए। पर पास होता गया तो अपने बावजूद सदा वह एक खोयें और भुले हुए ढंग में रहते।" वह संसार की गति विधियों को परखाता रहते थे। दुनियाँ उसे बाहर और अंदर चारों तरफ चक्कर में तैरती हुई मालुम होंती

थी। जिससे कुछ समझ में नहीं आता था। घूम फिर कर एक ही सच्चाई उसके लिए रह जातीथी वह सच्चाई थी उस की माँ।

विवाह तथा परिवार :

बचपन में ही जैनेंद्रकुमारजी कुशाग्र बुध्दि और चिंतनशील थें। माता और मामा के विचारोंने इनके संस्कारों को सर्वाधिक प्रबल बनाने के प्रयास किये।

सन १९३२ में जैनेन्द्रकुमारजी का विवाह भागवती देवी से हुआ। विवाह राष्ट्रीय भावनासे हुआ। केवल साढे स-तरह रूपये खर्च हुअे। नये कपडे भी नहीं बनाये। भागवती देवी अशिक्षित थी। "श्रीमती भागवती देवी यदि मामूली भी पढ़ी लिखी नहीं थी, तो यह उनके भाग्य की दृष्टिसे वरदान ही सिध्द हुआ है। उनके जैसी सब परिस्थितियों में निर्वाह कर सकने वाली और हर तरह का श्रम और कष्ट सह सकने वाली पत्नी शायद दूसरी नहीं हो सकती थी।

पत्नी हमेंशा उनके अनुकूल रही। जैनेन्द्रकुमारजी की पत्नी सहनशील तथा आदर्श गृहिणी थी। हर लालात में संतुष्ट रहना और शिकायत की बात मुँहपर न लाना इनके गुण थें।

जैनेन्द्रकुमारजी के साथ इन्होंने भी सामाजिक कार्यों में खुब बढ़-बढ़कर भाग लिया। परिवार के खर्च के लिये निश्चित आय के लिये अभाव में इन्होने कुशलता के साथ परिवार के पालनपोषण का दायित्व निभाया है। इनकी कार्यकुशलता और त्याग भावनाने साहित्यकार जैनेन्द्रकुमारजी को हमेशा प्रेरित किया।

जैनेन्द्रकुमारजी के परिवार में दो पुत्र एवं तीन पुत्रियाँ है। कुसुम, कुमुद और कनक नामक संपन्न घरानोमें ब्याही हैं। इनके

दो पुत्र दिलीप और प्रदीप सुशिक्षित और सुशील हैं। बडे पुत्र दिलीप की असामायिक मृत्यु हो गयी। छोटे पुत्र प्रदीप "पूर्वोदय" प्रकाशन नाम संस्था का संचालन कर रहे हैं। जैनेन्द्रकुमारजी के माता का देहावसान सन १९३५ इ. में हुआ।

शिक्षा :

जैनेन्द्रकुमारजी की शिक्षा का प्रारंभ "आलिफ" "बे" से हुआ। डॉ. विजय कुलश्रेष्ठ लिखते हैं कि "जैनेन्द्र पढने-लिखने में बहुत तेज तो नहीं पर शिथिल भी नहीं थे। तीसरी कक्षामें कम वय के छात्र होने के कारण प्रथम होते हुए भी चतुर्थ कक्षामें प्रवेश नहीं मिल सका था। बुध्दि की प्रखरता तो उनमें थी लेकिन लापरवाही उससे भी अधिक वे झेपू और शिर्मिले भी थे।"

सन १९११ में उन्होने मॅट्रिक परीक्षा पास की। दो वर्ष तक काशी विश्व विद्यालय में अध्ययन करने के उपरान्त असहयोग आंदोल न के कारण अपने आप को झाक झोर दिया । परिणाम स्वरूप सन १९३० इ. और सन १९३२ इ. में जेल की यात्रा करनी पड़ी।

जीवन संघर्ष :

असहयोग अंदोलनसे प्रभावित होकर जैनेन्द्रकुमार राज नैतिक क्षेत्र में रुचि लेने लगे। सन १९३० इ. में दिल्ली के विशाल जुलसमें जब पुलिस की लाठी मार उन्होने खायी, तबसे उन्होने राज नितिमें भाग नहीं लिया। जैनेन्द्रजीने नौकरी कभी नहीं की। वे हर वक्त अपने आपको मन में कमी महसुस करते थे। उन्होने फर्निचर की दुकानभी शुरू की थी, लेकिन उसमें वह असफल रहे। नौकरी के लिए वे बम्बई

कलकत्ता तक यात्रा कर चुके थे। " कभी-कभी मानसिक तनाव की स्थितिमें जैनेन्द्रजी के मन में आत्महत्या का विचार आता था। लेकिन वृध्द माँ का विचार आते ही वे अपनी दुरावस्था को झेलते हुए रहे।"

जीवन में उन्होने मर्यादा का पालन किया। निरंतर वे अध्ययनशिल रहे। जैनेन्द्रजी कम हँसते थे। लेकिन जब हँसते थे, तब गहराई और निश्चलतासे हँसते थें। अपने लेखन कार्य की शुरूवात को व्यक्त करते हुए वे बताते है "लिखना पढना हुआ नहीं। ढुँढनेपर भी कहीं नौकरी नहीं मिली। इसलिए २२-२३ वर्ष में लिखना आरंभ कर दीया।

साहित्यिक विधा की ओर :

नौकरी पाने में असफल रहने पर जैनेन्द्रकुमारजीने पुस्तकालय का आश्रय लिया। यथा संभव पुस्तकोंका सदुपयोग उन्होंने किया। इसीमेंही लिखने की प्रेरणा जागृत हुयी। श्रीमती सुभाद्राकुमारी चौहान पंडित माखनलाल चतुर्वेदी, आदि विव्दानोंसे उनकी भेंट हुअी। कहानियोंके प्रति वे पहलेसेही झुके थें। आचार्य चतुरसेन शास्त्रीजी के "अंतस्थल" गद्यकाव्य से प्रभावित होकर इन्होंने सर्व प्रथम " देश जाग उठा " लिखा। "खेल" कहानी प्रकाशित होने पर स्वर्गीय राष्ट्रकवि मैथिली शरण गुप्तजीने उनके संबंधामें कहा था " हमें हिंदी में रविबाबू और शारदबाबू अब मिलें और एक साथ मिलें। "

जैनेन्द्रकुमारजी की लेखनी साहित्यिक सीमित परिधि में ही उलझाती नहीं रही। सन १९२९ इ. में उनका पहला उपन्यास " परख " प्रकाशित हुआ। इसी उपन्यास को अकादमी पुरस्कार मिला। युगीन परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में वह अपने आप में अनुठा था।

आगे चलकर आपने अन्य ग्यारह मनो वैज्ञानिक उपन्यासों की निर्मिती की। वे इस प्रकार :-

१] तपोभूमि : प्रकाशन १९३२
२] सुनीता : प्रकाशन १९३५
३] त्यागपत्र : प्रकाशन १९३७
४] कल्याणी : प्रकाशन १९३९
५] सुखादा : प्रकाशन १९५२
६] विवर्त : प्रकाशन १९५२
७] व्यतीत : प्रकाशन १९७५
८] अनामस्वामी : प्रकाशन १९८४
९] जयवर्धन : प्रकाशन १९७६
१०] दशार्क : प्रकाशन १९८५
११] मुक्तिबोधा : प्रकाशन १९७४

कहानियाँ :-

१] प्रथमभाग : पूर्वोदय प्रकाशन दिल्ली १९७६
२] व्दितीय भाग : पूर्वोदय प्रकाशन दिल्ली १९८३
३] तृतीय भाग : पूर्वोदय प्रकाशन दिल्ली १९८३
४] चतुर्थ भाग : पूर्वोदय प्रकाशन दिल्ली १९८२
५] पाँचवाँ भाग : पूर्वोदय प्रकाशन दिल्ली १९७८
६] छटा भाग : पूर्वोदय प्रकाशन दिल्ली १९८१
७] सातवाँ भाग : पूर्वोदय प्रकाशन दिल्ली १९८३
८] आठवाँ भाग : पूर्वोदय प्रकाशन दिल्ली १९८५
९] नवाँ भाग : पूर्वोदय प्रकाशन दिल्ली १९८४
१०] दसवाँ भाग : पूर्वोदय प्रकाशन दिल्ली १९८५

निबंध संग्रह :-

१] जैनेन्द्र के विचार : सं. प्रभाकर माचवे १९३४
२] प्रस्तुत प्रश्न : सन १९३६
३] जड की बात : सन १९४५
४] पूर्वोदय : सन १९५१
५] साहित्य का श्रेय और प्रेम : सन १९५३
६] मंथान : सन १९५३
७] सोच विचार : सन १९५३
८] काम, प्रेम और परिवार : सन १९५३
९] ये और वे : सन १९५३
१०] साहित्यचयन : सन १९५२
११] विचार वल्लरी : सन १९५२

अनुवाद :-

१] मन्दालिनी [नाटक] मूल लेखक मैटरलिंका
अनुवाद सन १९२७ में और प्रकाशन १९३५ में हुआ।
२] प्रेम में भागवान कहानियाँ मूल लेखक टॉल्सटाय
प्रकाशन १९३७।
३] पाप और प्रकार [नाटक] मूल लेखक टॉल्सटाय
अनुवाद १९३७ में और प्रकाशन १९३५ में।
४] " अलेक्जेन्डर " कुप्रिम के मामा दपिट " के अनुवाद
की योजना थी। लेकिन उनका देहावसान हो गया।

जैनेन्द्रकुमारजी " कहानीकार जैनेन्द्र " नाम से प्रसिध्द हो चुके, लेकिन वे कहानीकार होने के साथ साथ निबंधकार, तत्वचिंतक और विचारवंत भी दिखाई देते है। जैनेन्द्रकुमारजी पर " टॉल्सटाय " का ज्यादा प्रभाव पड़ा वह उनके उनके प्यारे लेखक भी थें। उनका सीधा-साधा रहना और उच्च विचार यहीं सूत्र उन्होंने अपने जीवन में लाया था।

जैनेंद्रकुमारजी को अनेकोख्यात पुरस्कार भी प्राप्त हुए हैं। जिमें मुख्य हैं - इंडियन अकादमी, इलाहाबाद [परख १९२९] भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय, प्रेम में भगवान [१९५२], साहित्य अकादमी [मुक्तिबोध] १९६५, उत्तर प्रसाद पुरस्कार, हस्तीमल डालमिया पुरस्कार, उत्तर प्रदेश राज्य सरकार [समय और हम १९७०] पद्मभूषण [भारत सरकार १९७१] मानद डी. लिट. आगरा विश्व विद्यालय, १९७३, साहित्य वाचस्पति [उपाधि], हिंदी साहित्य संम्मेलन, प्रयाग १९७३, विद्या वाचस्पति [उपाधि गुरुकुल कांगडी], साहित्य अकादमी को फेलोशिप १९७४, एक लाख रूपये का अणुव्रत पुरस्कार १९७८, उत्तर प्रदेश सरकार का एक लाख रूपये का " भारत भारती " पुरस्कार १९८५ आदि।

विश्रांतीकाल :-

साहित्यिक जीवनी दृष्टि से जैनेन्द्रकुमारजी का सन १९३९ से सन १९५२ तक का काल विश्रांती काल माना जायेगा। उनका मानसभी " धन और श्रम " पर ही विचार करने लगा था। पारिवारिक क्षेत्र में धन का अभाव उन्हे हमेशा रहा था। जिससे उनका मासिक अं-तर्द्वंद निरंतर बढ़ता रहा। बल्कि इस समय भी

उनकी अध्ययन और मननशिलता को धारणा बराबर रही। आगे चलकर उनके साहित्य में जो व्यापक अनुभूति की प्रामाणिकता प्राप्त हो गयी, उसे सजाने का कार्य भी जैनेन्द्रकुमारजी ने इसी समय किया था।

सन १९५१ में पुत्र के सहयोग से " पूर्वोदय प्रकाशन " की स्थापना की। आजतक जैनेन्द्रकुमारजी का समूचा साहित्य लेखन साहित्य " पूर्वोदय प्रकाशन " से ही प्रकाशित किया गया।

सफलवक्ता :-

प्रारंभिक काल में लेखानसे छुटकारा पाने पर जैनेंद्रकुमारजी निष्क्रिय नहीं रहें। विभिन्न सभाओंनें और गोष्ठीयों में मौलोक विचारोंको अभिव्यक्त करने के लिए उनको आमंत्रित किया जाता था। विभिन्न स्थानोंपर विशाल सभाओंका उन्होंने अपने मौलिक विचार-रोंको प्रकट किया और यह प्रमाणित किया कि वे हिंदी को सीमाओंमें बंधे नहीं है। जैन समाजमें उनकी प्रतिष्ठा की धाक जम गयी। एक बाद में धार्मिक नेता का स्थान लेने लगे। उनके वक्तव्य की मौलिकता और प्रखरता उनके सृजनमें भी परिलक्षित हुई थी। उनके विचार की मौलिकता कभी-कभी नैतिकता को दृष्टीसे अवांछनीय मानी जाती थी। लेकिन उनका चरित्र अत्यंत ऊँचा, अंहकारहीन एवं अति आत्मीय था।

साहित्यिक व्यक्तित्व :-

जैनेन्द्रकुमारजो की साहित्यिक अनुभूति गहरी थी। जो उन्होंने कहा और लिखा है वह स्पष्ट और व्यापक है। दुर्बलों के

लिए उनके हृदय में आत्मीयता और सहानुभूति थी। आप सबके प्रति ईमानदार थे। पारिवारिक घात-प्रतिघातोंसे पीडित होनेपर भी जैनेंद्रकुमारजीने अपने भीतरी चैतन्य को हमेशा लोगों के लिए न्योछावर किया था। अपनी लेखन की मजबूरी के बारे में बताते हुओ वे अन्योंसे कहते थे "मुझमें न वक्तव्य है न, संदेह है जैसे बोल लेता हूँ, वैसे ही लिख जाता हूँ।

जैनेन्द्रकुमारजी धार्मिक कट्टरताके नहीं बल्कि उदारताके प्रतीक माने जाते हैं। वह धीमेसे बोलना प्रारंभ कर देते और धीरे-धीरे उसमें ठोस भाव आ जाते। बातचीतमें कभी-कभी शिष्ठ और दार्शनिक हो उठते। मामा भागवान दीन के पास रहते वक्त गुरूकुल आश्रम में जो संस्कार उनके हृदयपर अंकित रहा उनका प्रभाव उनके साहित्य स्थानपर पाया जाता है। सादगी के साथ अहंवादिता भी उनके व्यक्तित्व में समायी गयी थी।

जैनेन्द्रकुमारजी की जीवन दृष्टी की गहरी छाप उनके कृतियों में भी। वैचारिक धरातल पर वे विद्रोही नहीं रहें बल्कि क्रियात्मक रूप में भी वे विद्रोही रहे। युवावस्था में आतंकवादी दल से उनका संबध आया। उन आतंकवादी और रोमांचकारी घटनाओंने जैनेद्रकुमारजी के व्यक्तित्व को उभारा और अलंकृत किया। उनके संकल्प गहन और अनुभूति दृढ थी। उनका सारा जीवन संघर्षमय होने के कारण उनके कृतित्व को मूल में भी आंतरिक संघर्ष परिलक्षित था। अहंकार और प्रेम, स्पर्धा और समर्पण का संघर्ष कृतियों में विवेचित करते हुए उन्होंने विशिष्ठ आस्तिकता को कलात्मक पध्दति से व्यक्त किया।

जैनेन्द्रकुमारजी का लेखकीय व्यक्तित्व सादगीसे परिपूर्ण, सहज और सामान्य था। उनमें कहींपर भी आडंबर नहीं था। उनके व्यक्तित्व के विषयमें श्री रघुनाथ शरण झालानी कहते हैं,
" तेजस्विता, प्रखरता, तथा तीव्रता, गहनता दृढता, तथा व्यापकता इन छ: दृष्टियोंसे यदि हम अपने आलोच्य उपन्यासकारका विश्लेषण करे तो जैनेंद्रकुमारजीमें तेजस्विता , प्रखरता, गहनता, और सुक्ष्मता इन चार गुणोंकी स्थिती असंदिग्ध है ... जैनेन्द्र की कला में दृढता और नियतिवाद के संघर्ष में यह बात कुछ अधिक जचती नहीं है।"

प्रेम और अहिंसा की बातें कट्टरतासे मेल नहीं खा सकती। वे अपने जीवन के साथ संघर्ष करते-करते २४ दिसम्बर १९८८ को परमात्मा में विलीन हो गये।

जैनेंद्रकुमारजी जैसे लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकार को भावपूर्ण श्रध्दांजली अर्पित की गयी। हिंदी साहित्य में एक महान साहित्यकार को हम खो चुके हैं।